दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

खस्ताहाल आर्थिकी से शुरू साल

क्रिसमस, नया साल, पोंगल / संक्रांति की छुट्टियों और त्योहारों के उल्लास से भारत के मेहनती लोग फिर से तरोताजा हो चुके होंगे (सिवाय सांसदों के जिन्हें इन छुट्टियों में भी काम के लिए बुला लिया गया था)। असल में नया साल 15 जनवरी से ही शुरू हुआ है। मुझे इस बात का पक्का भरोसा है कि यह साल राजनीति और आर्थिकी के लिए एक नया मोड़ साबित होगा।

आज से चार महीने बाद जनता के फैसले के अनुरूप नई सरकार सत्ता में होगी। अब से तीस अप्रैल के बीच मौजूदा सरकार ऐसा कुछ नहीं कर पाएगी जिससे देश की अर्थव्यवस्था में कोई क्रांतिकारी सुधार आ जाए। इसलिए 2019 की शुरुआत में जो हालत है, संभवत वही नई सरकार के सामने होगी। इसलिए जरा आर्थिकी का जायजा ले लें।

वित्तीय स्थिरता

दो सबसे ज्यादा प्रचलित सूचकों की स्थिति काफी चिंताजनक है। पिछले साल भी सरकार वित्तीय घाटे के लक्ष्य को हासिल नहीं कर पाई थी और 2018-19 में भी 3.3 फीसद का लक्ष्य प्राप्त कर पाने की कोई संभावना नहीं दिखती। इससे साफ है कि सरकार के प्रत्यक्ष कर संग्रह और जीएसटी में सरकार की हिस्सेदारी में कमी आई है। इसे उम्मीद है कि जीएसटी क्षतिपूर्ति कोष से, कुछ छद्म-विनिवेश से और आरबीआइ गवर्नर को 'समझाते' हुए तेईस हजार करोड़ रुपए के अंतरिम लाभांश के रूप में पैसा जुटाया जा सकता है।

चालू खाते का घाटा (कैड) हारी हुई जंग है। यह 2017-18 में जीडीपी का 1.9 फीसद था, जो 2018-19 में निश्चित रूप से ढाई से तीन फीसद के बीच होगा। दिसंबर में कारोबारी निर्यात सिर्फ 0.3 फीसद ही बढ़ पाया, आयात में 2.44 फीसद की गिरावट दर्ज की गई, फिर भी व्यापार घाटा 13.08 अरब अमेरिकी डॉलर रहा। अगला वित्त वर्ष और ज्यादा कर्ज व कम विदेशी मुद्रा भंडार के साथ शुरू होगा।

घटती विकास दर

नोटबंदी आठ नवंबर, 2016 को हुई थी, 2016-17 की तीसरी तिमाही में। दिसंबर 2016 में खत्म हुई ग्यारह तिमाहियों में जीडीपी की वृद्धि दर 7.7 फीसद रही थी। इसके बाद सितंबर 2018 में खत्म हुई सात तिमाहियों में यह गिर कर 6.8 फीसद तक आ गई। 2018-19 की पहली छमाही में यह दर 7.6 फीसद थी, लेकिन केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (सीएसओ) ने अनुमान व्यक्त किया है कि दूसरी छमाही में यह गिर कर सात फीसद पर आ जाएगी।

वृद्धि दर में यह गिरावट निवेश की दर में कमी की वजह से है, खासतौर से निजी क्षेत्र में निवेश में कमी से। पिछले तीन साल में सकल स्थायी पूंजी निर्माण (जीएफसीएफ) 28.5 फीसद पर स्थिर बना हुआ है, और 2018-19 में भी यही स्थिति रहनी है। कम वृद्धि दर की बड़ी वजह नए रोजगार की कमी है। अगर हम सीएमआइई के आंकड़ों पर भरोसा करें तो न केवल बेरोजगारी बढ़ रही है, 2018 में एक करोड़ दस लाख रोजगार भी चले गए। मौजूदा बेरोजगारी दर 7.3 फीसद है।

कृषि क्षेत्र में संकट

कृषि क्षेत्र का हर संकेतक बता रहा है कि किसानों को किस तरह के गंभीर संकटों का सामना करना पड़ रहा है। एनडीए के चार साल में कृषि क्षेत्र की विकास दर -0.2, 0.6, 6.3 और 3.4 फीसद रही है। चार साल बाद 2017-18 के आर्थिक सर्वे में यह स्वीकार किया गया कि वास्तविक कृषि जीडीपी का स्तर और वास्तविक कृषि आमद स्थिर बनी हुई हैं। किसानों का गुस्सा हकीकत को दर्शाता है- कृषि उत्पाद के थोक दाम बहुत ही कम हैं (ताजा उदाहरण प्याज का है), एमएसपी तो ऐसा सपना है जो पूरा हो ही नहीं सकता और ज्यादातर किसान इससे वंचित हैं, फसल बीमा योजना ने किसानों को जम कर लूटा है और बीमा कंपनियों को मालामाल बना दिया है, मनरेगा की कोई मांग नहीं रह गई है और यह योजना पैसे की कमी से जूझ रही है, कृषि में सकल पूंजी निर्माण 2015-16 में -14.6 फीसद था जो 2016-17 में बढ़ कर 14.0 फीसद हो गया, इसका अर्थ यह है कि यह 2014-15 के स्तर पर बना हुआ है, बढ़ते कर्ज ने किसानों की मुश्किलें बढ़ा दी हैं जिससे कि किसान कर्ज माफी जरूरी हो गई है, और एक किसान परिवार की औसत मासिक आय 8931 रुपए है, जो उसकी गरीबी को बताती है।

उद्योग और निर्यात

औद्योगिकीकरण के जरिए ही मध्य-आय वाला विकसित देश बनने का रास्ता बनता है। पैंतालीस फीसद कार्यबल से कृषि क्षेत्र का काम नहीं चलने वाला, न ही यह कुल आबादी के साठ फीसद हिस्से की जीविका का मुख्य स्रोत बन सकता है। यह उद्योग और निर्यात ही है जो रोजगार पैदा करेगा। लेकिन आज दोनों ही क्षेत्र संकटों में घिरे पड़े हैं। औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक पिछले साल अप्रैल से नवंबर के बीच 122.6 से 126.4 के बीच ही बना रहा।

करीब 927 परियोजनाएं ठप पड़ी हैं, जिनमें से 674 निजी क्षेत्र में हैं। सीएमआइई के मुताबिक 2010-11 में निवेश के प्रस्ताव 25,32,177 लाख करोड़ के थे, जो 2017-18 तक गिर कर 10,80,974 करोड़ पर आ गए। इससे तो लगता है कि जहां तक उद्योग क्षेत्र की बात है, न तो बैंक उधार देना चाह रहे हैं, न ही प्रोमोटर उधार लेना चाह रहे हैं। अप्रैल-जून, 2016 से उद्योग को दिए जाने वाले कर्ज की वृद्धि दर में कमी हैरान कर देने वाली रही है। लगातार चार तिमाहियों में यह ऋणात्मक बनी रही और दस तिमाहियों में से सिर्फ दो में ही यह दो फीसद से ऊपर निकल पाई।

निर्यात की हालत तो बहुत ही दयनीय है। एनडीए सरकार के कार्यकाल में किसी भी साल में कारोबारी निर्यात 311 अरब डॉलर से ऊपर नहीं जा पाया। 2013-14 में यह 315 अरब डॉलर रहा था। इस दौरान रोजगार पैदा करने वाले दो प्रमुख क्षेत्रों- कपड़ा और रत्न व जवाहरात उद्योग बुरी तरह प्रभावित हुए हैं।

दुनिया क्या सोचती है

दुनिया भारत की ताकत और क्षमता को पहचानती है, लेकिन मौजूदा आर्थिक हालत ने इसे निराश कर दिया है। 2018-19 में (जनवरी तक) एफपीआइ (विदेशी पोर्टफोलियो निवेशक) और एफआइआइ (विदेशी संस्थागत निवेशक) डेट और इक्विटी से समान हिस्से में 94259 करोड़ रुपए निकाल चुके हैं। सॉवरेन बांड की दर 31 दिसंबर 2018 को 7.3 फीसद थी। स्पष्ट रूप से, 'तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था' की डींग को दुनिया में कोई भी मानने को तैयार नहीं है। मई, 2019 में जनता जिस सरकार को चुनेगी, उसमें ही हमारी उम्मीद और भरोसा है।

सीखने-सिखाने की हकीकत

कालूराम शर्मा

असर यानी एन्युअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट स्कूली शिक्षा से जुड़े और इसमें दिलचस्पी रखने वाले या कहें कि चिंता करने वालों के लिए एक झटका कही जा सकती है। रिपोर्ट बताती है कि भारत जैसे देश में प्रारंभिक कक्षाओं के बच्चे पढ़ना और बुनियादी गणित भी नहीं सीख पा रहे हैं।

यह असर की तेरहवीं रिपोर्ट है, जो स्कूलों में सीखने-सिखाने की स्थिति बयान करती है। पढ़ना शिक्षित होने की पहली सीढ़ी कही जा सकती है। अगर बच्चे 'पढ़' नहीं पाते तो शिक्षा पाने का आगे का रास्ता समस्याओं से लदा होगा। इसी प्रकार गणित में मूलभूत संक्रियाओं की समझ जीवन के लिए भी अपरिहार्य है। यों शिक्षा के उद्देश्य व्यापक हैं, जिनमें शामिल है संवैधानिक मूल्यों को भारतीय समाज में पोषित करना। बच्चे न केवल साक्षर बनें, बल्कि उनमें संवैधानिक मूल्यों को पोषित करने में स्कूल अहम भूमिका अदा करें। लिहाजा, असर ने अपने अध्ययन में भाषा और गणित के बुनियादी मसलों पर अध्ययन किया है।

इसमें कक्षा तीसरी, पांचवीं और आठवीं स्तर के लगभग साढ़े पांच लाख बच्चों का देशव्यापी अध्ययन किया गया, जिसमें तीन से सोलह बरस के बच्चों के नामांकन और पांच से सोलह बरस के बच्चों में पढ़ने और अंकगणीतीय क्षमताओं को जांचा गया। यह अध्ययन देश के ग्रामीण क्षेत्रों से ताल्लुक रखता है। अध्ययन में दूसरी कक्षा के स्तर का पाठ तीसरी, पांचवी और आठवीं के बच्चों को दिया गया। तीसरी कक्षा के पचीस फीसद बच्चे पढ़ पाए, जबकि कक्षा पांचवी के पचास फीसद और कक्षा आठवीं के तिहत्तर फीसद बच्चे पढ़ पाए।

गणित में पांच से सोलह बरस के बच्चों से गिनती, घटाव और भाग वगैरह के सवाल पूछे गए। गणित में तीसरी कक्षा के 20.9 फीसद बच्चे सरल घटाव के सवाल हल नहीं कर पाते। पिछले अध्ययन की बनिस्बत पांचवी कक्षा में भाग के सवालों को हल करने वाले बच्चों का प्रतिशत थोड़ा बढ़ा है, जो छब्बीस से बढ़ कर 27.8 फीसद हो गया। कक्षा आठवीं के बच्चों के सकल प्रतिशत में कोई बदलाव नहीं आया है। अध्ययन के मुताबिक चौवालीस फीसद बच्चे ही तीन अंकों में एक अंक की संख्या से भाग के सवाल हल कर पाते हैं।

पढ़ना सीखने का मामला पढ़ने के अभ्यास से जुड़ा है। पढ़ना कोई यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है। हमारे यहां जिस तरह पढ़ने पर शिक्षक द्वारा काम किया जाता है वह पाठ्यपुस्तक ही आधार बनती है। जबकि पाठ्यपुस्तक पढ़ना सिखाने में योगदान कम ही कर पाती है। दरअसल, पाठ्यपुस्तक का जोर प्रश्नों के हल करने आदि पर अधिक होता है। भाषा शिक्षण के तमाम दस्तावेज कहते हैं कि पढ़ने के लिए बच्चों को बाल साहित्य उपलब्ध कराने की जरूरत है। स्कूलों में लाइब्रेरी की जरूरत है। लिहाजा, हम पढ़ने से केवल सतही अर्थ निकालने के आदी हैं। यों अक्षरों और शब्दों को पहचानना पढ़ना तो नहीं। पढ़ने का अर्थ है समझ कर पढ़ना। इस लिहाज से असर की रिपोर्ट से यह समझ में नहीं आता कि जो बच्चे पढ़ पा रहे हैं वे समझ भी पा रहे हैं।

असर के इस अध्ययन में स्कूलों से संबंधित और भी पहलुओं को टटोलने की कोशिश की गई है। इसमें बच्चों का नामांकन, चारदीवारी, बिजली, शौचालय, लाइब्रेरी, मिड-डे मिल आदि शामिल हैं। ये तमाम कारक हैं जो स्कूली शिक्षा को प्रभावित करते हैं। 2018 में 25.8 फीसद ऐसे स्कूल पाए गए जहां लाइब्रेरी नहीं है। 37.3 फीसद ऐसे स्कूल हैं जहां बच्चे लाइब्रेरी की पुस्तकों का इस्तेमाल नहीं करते। 36.9 फीसद स्कूलों में देखा गया कि बच्चे लाइब्रेरी की पुस्तकों का इस्तेमाल कर रहे हैं। कहा जा सकता है कि पढ़ने-लिखने की संस्कृति के लिए लाइब्रेरी को औजार के रूप में देखना अभी कोसों दूर लगता है।

बच्चों के सीखने का रिश्ता शिक्षकों की पेशेवर तैयारी से है। शिक्षकों की पेशेवर तैयारी के लिए शिक्षक-शिक्षा का ताना-बाना तो हमारे शिक्षा तंत्र द्वारा बुना गया है, मगर यह काफी लचर है। शिक्षक बनने के लिए पूर्व सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण मौजूं है। जो शिक्षक स्कूलों में अध्यापन करते हैं उनके लिए सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण का प्रावधान किया गया है। पर शिक्षकों की पेशेवर तैयारी- पूर्व सेवाकालीन और सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण- का मामला जोर नहीं पकड़ पा रहा है।

शिक्षकों की तैयारी से पहले शिक्षक प्रशिक्षकों की तैयारी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। पर शिक्षक प्रशिक्षकों और शिक्षकों के बीच बराबरी स्थापित करने के संजीदा प्रयास नहीं होते। अगर शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षकों को व्यावहारिक ज्ञान भाषणों से पढ़ाता है तो शिक्षक भी अपनी कक्षाओं में वैसा ही करेंगे और यही हो भी रहा है। खासकर विज्ञान जैसे विषय में मात्र यह कहते रहना कि यह करके सीखने का विषय है, मगर पढ़ाया भाषण देकर जाता है। यही हाल भाषा को लेकर है। खासकर प्राथमिक कक्षाओं में, जहां बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाना एक महत्त्वपूर्ण कौशल है। मगर प्रशिक्षण संस्थानों में बच्चों को स्वतंत्र ढंग से कैसे पढ़ना-लिखना सिखाया जाए इसके मौके नहीं मिलते। शिक्षा जगत में बच्चों में सृजनशीलता विकसित करने की बातें तो काफी होती हैं, मगर शिक्षकों की सृजनशीलता को बढ़ाने के प्रयास न के बराबर होते हैं। यही वजह है कि जिस भावना से शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षकों को प्रशिक्षित करता है उसी भावना के साथ शिक्षक स्कूल में अपने बच्चों के साथ पेश आते हैं।

मुद्दा

> पढ़ना सीखने का मामला पढ़ने के अभ्यास से जुड़ा है। पढ़ना कोई यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है। हमारे यहां जिस तरह पढ़ने पर शिक्षक द्वारा काम किया जाता है वह पाठ्यपुस्तक ही आधार बनती है। जबकि पाठ्यपुस्तक पढ़ना सिखाने में योगदान कम ही कर पाती है। दरअसल, पाठ्यपुस्तक का जोर प्रश्नों के हल करने आदि पर अधिक होता है।

यशपाल समिति टिप्पणी करती है कि प्रशिक्षण की खामियों की वजह से विद्यालयों में गुणात्मक ढंग से सीखना-सिखाना कमजोर होता है। समिति सिफारिश करती है 'विद्यालयी शिक्षा की प्रासंगिकता को सुनिश्चित करने के लिए शिक्षकों की पेशेवर तैयारी की सामग्री नए सिरे से बनानी चाहिए।

वर्तमान स्कूली शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह संवैधानिक मूल्यों को भारतीय समाज में पोषित करने में कामयाब नहीं रही है। बल्कि शिक्षा ने हमारे समाज में विषमता को बढ़ाया ही है। बच्चे, सूचनाओं के बोझ तले दबे हुए हैं। शिक्षकों को दकियानूसी तौर-तरीकों से बाहर निकलने के अवसर कम ही मिल पा रहे हैं कि वे बच्चों को सूचनाओं की घुट्टी पिलाने के बजाय उन्हें अर्थपूर्ण सीखने की ओर प्रेरित कर सकें।

स्कूलों में गुणात्मक सुधार तभी हो पाएगा, जब शिक्षकों में उन दक्षताओं का विकास किया जाए, जो बच्चों को सिखाने के लिए जरूरी होती है। शिक्षक प्रशिक्षणों की सबसे बड़ी समस्या है इनका एकरेखीय होना। अनुभव बताते हैं कि एक जैसे प्रशिक्षण पाकर शिक्षक ऊब जाते हैं। अधिकतर शिक्षक प्रशिक्षणों का आयोजन यह समझे बिना ही किया जाता है कि शिक्षकों की आवश्यकता क्या है? अगर इसे समझ भी लिया जाता है तो इसके वे पहलू नजरंदाज हो जाते हैं, जो शिक्षक को बच्चों के साथ आजमाने होते हैं।

शिक्षकों की तैयारी के पूर्व शिक्षक प्रशिक्षकों की तैयारी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक प्रशिक्षकों व शिक्षकों के बीच गहरी खाई बनी हुई है। यहां बराबरी स्थापित करने के संजीदा प्रयास करने की जरूरत है। शिक्षा जगत में बच्चों में सृजनशीलता विकसित करने की बातें तो काफी होती हैं, मगर शिक्षकों की सृजनशीलता बढ़ाने के प्रयास न के बराबर होते हैं। यही वजह है कि जिस भावना से शिक्षक प्रशिक्षक शिक्षकों को प्रशिक्षित करता है उसी भावना के साथ शिक्षक स्कूल में अपने बच्चों के साथ पेश आते हैं।

अज्ञान और विज्ञान

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

इत्तेफाक था कि श्रीशती का भारत का मजाक उड़ाना कि जिस हफ्ते चीन ने चांद पर अपना जहाज उतार कर साबित किया कि अंतरिक्ष की दौड़ में वह हमसे बहुत आगे है, अपने देश में चल रहा था भारतीय विज्ञान सम्मेलन। श्रीशती का मजाक इसलिए कहती हूं, क्योंकि इस सम्मेलन में आंध्र विश्वविद्यालय के कुलपति ने कुछ ऐसी बातें कहीं, जो साबित करती हैं कि हम विज्ञान के क्षेत्र में पीछे इसलिए हैं, क्योंकि हमारे विद्वान किसी प्राचीन युग में अभी तक जी रहे हैं। कुलपति साहब ने विज्ञान में भारत की उपलब्धियां गिनाते हुए कहा कि हम युगों पहले जानते थे टेस्ट ट्यूब बच्चों को पैदा करने का ज्ञान। सबूत? गांधारी ने सौ बेटे पैदा किए मिट्टी के कटोरों में। यह टेस्ट ट्यूब तकनीक नहीं थी तो क्या था? कुलपति नागेश्वर राव ने आगे यह भी कहा कि विष्णु के दस अवतार साबित करते हैं कि मानव जाति के विकास के राज भी हम युगों पहले जानते थे।

नरेंद्र मोदी के राज में दो शब्द हैं, जिनके मायनों में परिवर्तन आया है, और शायद विकास भी। एक है विज्ञान और दूसरा इतिहास। विज्ञान में परिवर्तन शुरू किया प्रधानमंत्री ने खुद, जब उन्होंने कहा था मुंबई के एक अस्पताल के उद्घाटन समारोह में कि गणेश भगवान सबूत हैं कि प्लास्टिक सर्जरी की जानकारी प्राचीन भारत की देन है। वरना शिव कैसे लगा सकते थे अपने बेटे पर हाथी का सर? अफसोस कि उन्होंने सुश्रुत को याद नहीं किया ऐसी बात कहते हुए, क्योंकि सच तो यह है कि प्लास्टिक सर्जरी में जो नाक बदलने का तरीका आज दुनिया भर में प्रचलित है उसको सुश्रुत की इजाद माना जाता है। सुश्रुत की मूर्तियां विश्व के प्रसिद्ध मेडिकल कॉलेजों में दिखती हैं, लेकिन भारत के अधिकतर बच्चे इनका नाम तक नहीं जानते हैं, जैसे प्राचीन गणितज्ञों के नाम नहीं जानते हैं। इनके नाम भुला दिए गए हैं 'सेक्युलरिज्म' का वास्ता देकर, ताकि भारत के मुसलमानों को न लगे कि प्राचीन भारत की प्रशंसा करने में छिपी है इस्लाम को नीचा दिखाने की साजिश।

इन दिनों जब मोदी के सितारों की रोशनी थोड़ी कम हो गई है, मेरे ऊपर खूब तंज कसा जा रहा है सोशल मीडिया पर कि मैंने मोदी को समर्थन देकर बहुत बड़ी भूल की थी। हर लिंचिंग के बाद कोई न कोई ट्वीट करके मुझे याद दिलाता है कि इन बेगुनाहों का खून मेरे हाथों पर भी है। क्यों किया आपने मोदी का समर्थन?

बताती हूं क्यों। जब उन्होंने परिवर्तन का वादा किया था पिछले आम चुनावों में तो मुझे विश्वास था कि राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक परिवर्तन के अलावा मोदी जरूर शिक्षा क्षेत्र में भी परिवर्तन लाएंगे, ताकि भारत के बच्चों को सिखाया जाएगा भारतीय होने का मतलब। भारतीय होने का गर्व कैसे सीखेंगे जब तक उनको प्राचीन भारत की महान देन के बारे में नहीं सिखाया जाएगा? सो, शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन लाना बहुत जरूरी था, जो अभी तक नहीं हुआ है। उलटा एक अजीब किस्म के हिंदू सामने आए हैं, जिनको भारतीय होने पर इतनी शर्मिंदगी है कि इस शर्मिंदगी को छिपाने के लिए प्राचीन भारत से वे चीजें ढूंढ़ निकालते हैं, जो न इतिहास से वास्ता रखती हैं न विज्ञान से, लेकिन इनको वे उछालते फिरते हैं जैसे यही थीं प्राचीन भारत की उपलब्धियां। ऐसा करके असली उपलब्धियों को भी मिथ्या साबित करने का काम करते हैं।

> प्राचीन भारत ने विश्व को बहुत कुछ दिया है कई क्षेत्रों में। इस महान विरासत का विश्लेषण करना बहुत जरूरी है, ताकि इतिहास और मिथ्या गाथाओं में अंतर समझ में आए। अतीत को समझने के बाद ही कोई देश गर्व से आगे बढ़ सकता है, रोशन भविष्य की तरफ।

आंध्र विश्वविद्यालय के कुलपति अकेले नहीं हैं इस कोशिश में। उनका साथ दिया है मोदी के कई मंत्रियों, साथियों और समर्थकों ने। एक मंत्री वे थे, जिन्होंने कहा था कि इंटरनेट प्राचीन भारत में हुआ करता था। सबूत? धृतराष्ट्र ने इसके द्वारा कुरुक्षेत्र का पूरा युद्ध अपने महल में बैठ कर देखा। इंटरनेट नहीं था यह तो क्या था? कौन समझाए ऐसे लोगों को कि दुनिया के हर देश में हैं पुरानी गाथाएं, जिनमें देवताओं द्वारा ऐसे कार्यों का वर्णन है, जिनको सुन कर ऐसा लगता है कि वास्तव में एक युग था जब लोग सूर्य तक पहुंच सकते थे और अंतरिक्ष का परिवर्तन कर सकते थे। इनको मिथ्या गाथाएं माना जाता है, इतिहास नहीं।

हमने कभी इतिहास को मिथ्या गाथाओं से अलग करने की कोशिश नहीं की है, सो इतना भी ज्ञान नहीं है आम भारतवासी को कि भगवान राम देवता थे या केवल अयोध्या के एक महान राजा। न ही हम पूरी तरह साबित कर पाए हैं कि कुरुक्षेत्र में असली युद्ध हुआ था कभी या महाभारत भी सिर्फ किसी ऋषि की काल्पनिक गाथा है। मोदी पहले भारतीय प्रधानमंत्री हैं, जो इतिहास की वास्तविकता ढूंढ़ने का काम कर सकते थे, क्योंकि उनके पैरों में नहीं लगी थीं 'सेक्युलरिज्म' की बेड़ियां। अफसोस कि उन्होंने इस क्षेत्र में परिवर्तन लाने के बदले अपने उन साथियों को नहीं रोका है, जो प्राचीन भारत के बारे में बकवास करते फिरते हैं।

कोई आम आदमी ने दिया होता वह बयान, जो भारतीय विज्ञान सम्मेलन में आंध्र विश्वविद्यालय के कुलपति ने दिया था, तो उसको क्षमा किया जा सकता था अज्ञान का वास्ता देकर। लेकिन जब देश के सबसे बड़े वैज्ञानिकों के बीच इस तरह की बातें एक विद्वान करता है, तो उसको ज्ञान और विद्या जैसे शब्दों के इस्तेमाल का भी अधिकार नहीं होना चाहिए। आज भी अगर भारत के बहुत बड़े विश्वविद्यालय को संभाले हुए हैं, तो चिंता होनी चाहिए हमको कि यहां के छात्रों को क्या पढ़ाया जा रहा है। प्राचीन भारत ने विश्व को बहुत कुछ दिया है कई क्षेत्रों में। इस महान विरासत का विश्लेषण करना बहुत जरूरी है, ताकि इतिहास और मिथ्या गाथाओं में अंतर समझ में आए। अतीत को समझने के बाद ही कोई देश गर्व से आगे बढ़ सकता है, रोशन भविष्य की तरफ।

खबर लपकने के दौर में

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

एक दिन अखिलेश यादव ने बड़े दिलवाला होकर बड़ी खबर बनाई। जयंत चौधरी को पहले दो सीटें दी थीं, फिर एक और दी और फिर एक चैनल ने दिखाया कि एक और दे दी!

यानी कि भाजपा से लड़ने के लिए अखिलेश कुछ भी करेंगे!

राहुल बोले कि उनने सब सीटें बांट लीं। अब हम अस्सी पर लड़ेंगे, नतीजे चौंकाने वाले होंगे!

इसी बीच मायावती का जन्मदिन मना। बहुत बड़ा केक कटा। लोग हाथ से ही काट-काट कर खाते दिखे! एक चैनल ने जन्मदिन पर पुराने तरीके की चुटकी लेनी चाही, लेकिन कोशिश बेकार रही!

यह मजाक का सीजन नहीं है प्यारे!

न्यूज एक्स में 'द हिंदू लिटफेस्ट' का एक अंग्रेजी लेखक रो रहा था कि भविष्य में कोई आए या जाए, 'जनविमर्श' का जितना नुकसान हो चुका है उसका इलाज मुश्किल है।

हिंदू का संपादक बोला : मैं रोज ट्विटर देखता हूं कि आज कितनी गाली पड़ी और फिर काम में लग जाता हूं।

सही है : छमा बड़न को चाहिए छोटन को उत्पात!

कोई तीन बरस बाद, पुलिस ने कन्हैया कुमार आदि के खिलाफ 'देशद्रोह' का आरोप लगाते हुए बारह सौ पेज की चार्जशीट दाखिल कर डाली!

इधर चार्जशीट आई, उधर कई एंकर बढ़-बढ़ कर हाथ लगाने लगे। चैनल उन टेपों को बार-बार दिखाने लगे, जिनमें जेएनयू में आजादी के नारे लगाते लड़के दिखते थे। चर्चाकार बाल की खाल निकालने लगे कि ये टेप असली हैं कि नकली? पक्षकार बोले के फारेंसिक लैब ने उनको 'असली' कहा है।

एक चैनल पर एक एंकर बार-बार टेप दिखाता, हम भी देखते, लेकिन कन्हैया का चेहरा नजर नहीं आता था। हां 'आजादी आजादी' के नारे जरूर सुनाई पड़ते थे।

कन्हैया खबर में आए तो चैनल लपके। उनके निर्भीक उत्तर प्रभावित करने वाले रहे। एक सवाल अटका रहा कि यह सब चुनाव के कुछ महीने पहले ही क्यों हो रहा है?

इस बार जेएनयू वाले अधिक आश्वस्त नजर आए। एक चेहरा किलक कर कह रहा था कि कुछ साबित नहीं होगा। बस उन्नीस के चुनाव की बात है!

लेकिन कुछ एंकर और देशभक्तों ने मिल कर 'टुकड़े टुकड़े गैंग' के 'टुकड़े टुकड़े' कर दिए।

> जब भी कर्नाटक की खबर आती है, चैनल सीधे सरकार हिलाने लगते हैं। भाजपा हिलाए समझ में आती है लेकिन एंकर भी हिलाएं, यह समझ से बाहर है। क्या कुछ एंकरों ने कर्नाटक सरकार को हिलाने की सुपारी ली है?

कौन कहता है कि 'वीर विहीन मही मैं जानी'!

एक जज ने ताजा ताजा मिली बड़ी नियुक्ति ठुकरा दी! इसे कहते हैं त्याग! लेकिन राजनीतिक दिलजले फिर भी कहते रहे कि यह तो वफादारी का इनाम था!

इसी बीच कर्नाटक से खबर आई कि बीजेपी, कांग्रेस के विधायकों की 'पोचिंग' कर रही है, कि खबर आई कि दो विधायक टूट गए हैं। कुमार स्वामी की सरकार अब गई कि अब गई।

फिर खबर आई कि कांग्रेस की पोचिंग के डर से बीजेपी के विधायक हरियाणा के मानेसर के पांच सितारा में लाए गए हैं। फिर एक चैनल ने खबर दी कि कर्नाटक की सरकार बच गई। जो बाहर जाने वाले थे वे लौट कर आ गए!

जब भी कर्नाटक की खबर आती है, चैनल सीधे सरकार हिलाने लगते हैं। भाजपा हिलाए समझ में आती है लेकिन एंकर भी हिलाएं, यह समझ से बाहर है। क्या कुछ एंकरों ने कर्नाटक सरकार को हिलाने की सुपारी ली है?

कि इस बीच स्वनामधन्य 'कोटलर सम्मान' ने एक बड़ी कॉमिक खबर बनाई। एक एंकर हंसते हुए कहती रहीं कि पता नहीं यह सम्मान 'सम्मान' है भी कि नहीं, कि ये कैसा सम्मान है कि निर्णायक मंडल के नाम तक नहीं हैं, कि कहते हैं कि यह तो उनको ही मिलता है, जो इसे स्पांसर करते हैं...।

ये मुए निंदक क्या जानें कि अगर कोई 'दाता' किसी को 'सम्मान' देता है तो 'पाता' को उसे धन्यवाद सहित ग्रहण करना चाहिए! सम्मान मिलना तो गर्व का विषय होता है। यही भारतीय परंपरा है।

कहा भी है : 'दान की बछिया के दांत नहीं देखे जाते!'